International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

भारत के भूमंडलीकरण में हिन्दी क वता

डॉ. सुमनलता,
एसो सएटप्रोफेसर (हिंदी)
डी.ए.वी. कॉलेज, पहोवा।

भूमंडलीकरण बहुआयामी वचार या यथार्थ है। आज कोई भी देश या समाज इसके वर्तमान रूप की गरफ्त में आने से नहीं बचा पाया। भारत का 'वसुधैवकुटुम्बकम' या ' वश्वकटुम्बकमवाद' और भूमंडलीकरण समानार्थी नहीं है। इनके निहितार्थ अलग-अलग हैं- 'वसुधैवकुटुम्बकम' उदार चरित का लक्षण है जो सारे वश्व में आत्मीयता स्था पत करने वाली भावात्मक मानवीय अवधारणा है। जो 'यह मेरा देश है के स्थान पर यह मेरी धरती है ' की प्रस्थापना करता है जो वश्व के हर कोने में सहज प्रगति का परिणाम चाहता है। जब क वैश्वीकरण पूंजीवादी देशों की वश्व वजय का शंखनाद है जहां केवल दौड़... only race...... केवल.... ना दिल ना दिशा है। यह पूरी दुनिया को सीधे-सादे दो भागों में बांटता है- 'अमीर देश और गरीब देश'। यह शुद्ध रूप से बाजारवाद है जिसे उदारीकरण के मोहक शब्दजाल में बांधा गया है जो यह सुनिश्चित करता है क गरीब लोग और देश वश्व के नक्शे से मट जाए। राजनीतिक समाजशास्त्री रजनी कोठारी लखती हैं- "भूमंडलीकरण ऐसी परिस्थितियां तैयार करता है जिसके कारण लाखों करोड़ों लोग खुद को हा शये पर पाकर अवांछित और त्याज्य समझने लगते हैं।"[i] इसका परिणाम यह हुआ क यह काल चंद लोगों के लए स्वर्ण युग साबित हुआ तथा अ धकांश लोगों के लए वस्थापन, वनाश और वषमता का पर्याय बना।

भारत ने भी अपनी अर्थव्यवस्था के द्वार इस बेलगाम पूंजी के लए खोल दिए तथा अपनी नीतियों को भी इसके अनुरूप बदला,बेलगाम पूंजी ने भी भारत को पारितो षक दिया फलस्वरूप सच्चे लोकतंत्र, ना भकीय शक्ति और आ र्थक महाशक्ति जैसे शब्दों से हमें सम्मानित कया।

परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था का चरित्र कुछ इस प्रकार उभरा क बड़े उद्योगों एवं कंपनियों को अत्या धक लाभ हुआ और उसका एकाध अंश गरीब-गुरबों तक पहुंचने लगा यह लगभग ऐसा हो गया क घोड़े को चारे में इतना अन्न खलाया जाए क उसके कुछ कण लीद में निकल आएं। इन कणों को खाकर गौरैया कीड़े-मकोड़े जी वत रहें तथा इसे अपनी नियति

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

समझें। भारत के कर्णधार भी और अर्थशास्त्री भी आम जन से यही उम्मीद करते हैं क वकास से संतुष्ट होकर सरकार की नीतियों का समर्थन करें। शायद इसी कारण संसद में करोड़पति सांसदों की संख्या लगातार बढ़ रही है और करोड़ों लोगों के पास सर छुपाने को छत, रोटी, कपड़ा तक मौजूद नहीं।

अब हम बात कर रहे हैं- 'भारत का भूमंडलीकरण और क वता' के वषय में। हम जानते हैं क क व अपने युग का सहयात्री और समीक्षक होता है इसी कारण क वता ने वैश्वीकरण को 'पूंजीपति देशों की वजय का शंखनाद ' कहते हुए आमजन को समझाने का प्रयास कया और कहा वैश्वीकरणरोमन दंत कथाओं के देवता जेनस के समान है जो आरंभ और संक्रमण के देवता हैं जिनके दो सर हैं एक पूर्व की ओर देखता हुआ और एक पश्चिम की ओर देखता हुआ। हमारे समाने वैश्वीकरण कुछ इसी रूप में उभरा है दो मुंह वाला जीव, जिसका एक मुंह अपरि मत शुभंकरी संभावनाओं की ओर इशारा करता है और दूसरा अ शव संभावनाओं की ओर। वश्व मनीषा की परीक्षा इसमें होगी क वश्व को आकर्षण की डोर खींचती है।

इस दौर का क व कहता है क कुछ लोग भूमंडलीकरण को शुभंकरी शव कहकर आमजन को संतुष्ट करना चाहते हैं। वे कहते हैं क यह सभ्यताओं और संस्कृतियों का सम्मिलन है, आदान-प्रदान है जिससे वश्वव्यापी संस्कृति का उदय हो रहा है। मानवीय सृजनशीलता फल-फूल रही है तथा जीवन और समृद्ध हो रहा है। न जाने क्यों वे इस गहराई में नहीं जाना चाहते क इस उदीयमान संस्कृति के मूल में केवल फैलता हुआ बाजार है जिसकी परिणति नितांत अ शव है। मु ीभर अनिय मत बाजार में खुलकर खेलती हुई पूंजी, कुलांचे मारती हुई प्रौद्यो गकी और लुप्त होती देशकाल की सीमाएं इन सबके परिणामस्वरूप एक ओर तो काले धन को सफेद बनाने और नशीले पदार्थों तथा ह थयारों को सारे वश्व में निर्यात कर पाने का धंधा काफी आसान हो गया तथा बच्चों और स्त्रियों के अवैध व्यापार में भारी वृ द्ध हुई है। इसका असर यह भी हुआ है क वश्व में अपराध और आतंक की पकड़ मजबूत हुई है।

पछले दो दशकों से क व वश्व की इन घटनाओं और हलचलों पर पैनी नजर बनाए हुए है। शब्दों के जादूगर इस भूमंडलीकरण को देखकर कभी-कबी तो क व और उसकी क वता पीड़ा से कराह उठती है-

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

"अचानक कसी चीज से टकराकर लड़खड़ाता हूं
तो अपने ही भीतर से आवाज आती है हाहा हाँ
कुछ कहते हुए थोड़ी देर में हकलाने लगता हूं।"[ii]

लगता है क व को घेर लेते हैं ढेर सारे प्रश्न, तथ्य, घटनाएं, छ वयां, मंजर, शोरगुल और हो हल्ला.... क व कौन है पूछता है न जाने कस्से कहता....

- ये कौन है? जो साहित्य की एकमात्र पूंजी और सहित की भावना को पीड़ा दे रहा है।
- ये कौन है? जो मानवा धकार के बहाने देशों के आतंरिक मामलों में हस्तक्षेप कर रहा है।
- ये कौन है? जो हम से तपाक से हाथ मला रहा है।
- ये कौन है? जो हमारी मानवता को लोभ, मोह के तारों से जोड़ रहा है प्रेम दया के तारों को तोड़ रहा है।
- ये कौन है? जो वसुधा को मु ी में लेकर तिलस्मी और अय्यारी चाल चल रहा है।
- ये कौन है? जो मेरे पेड़ों, पहाड़ों को समतल कर रहा है जो मेरी नदियों को सुखा रहा है।
- ये कौन है? जो आ र्थक संवृ द्ध की आड़ में हमारे हवा, पानी, सूरज की करणों का संतुलन बिगाड़ रहा है।
- ये कौन है? जो लहलहाते खेतों को छीनकर उन्हें कंकरीट बना रहा है।
- ये कौन है ?वैश्विकरण की तीन प्रकृति-भूमंडलीकरण, निजीकरण, उदारीकरण यानी (एलपीजी) को चीख-चीख कर बता रहा है।
- ये कौन है? जो हमारी राजनीति, समाज और संस्कृति पर प्रहार कर रहा है।
- ये कौन है? जो ज्ञानाधारित अर्थव्यवस्था का अ भप्राय केवल उच्च प्रौद्यो गक और आधुनिक वज्ञान तक ही सी मत मान रहा है।
- ये कौन है? जो हमारे हजारों साल से वक सत लोक ज्ञान को नकार रहा है।
- ये कौन है? जो हमारे ज्ञान कोषों, पद्धतियों, परम्पराओं को खारिज कर रहा है।
- ये कौन है? जो हमारे पेड़-पौधों, पशु-प क्षयों, खनिजों, जलाशयों, जलवायु, कृ ष कर्म पर नजर गड़ा रहा है।

- ये कौन है? जो हमारे कुटीर उद्योगों की कब्र पर फास्टफूड की चकाचौंध बिखेर रहा है।
- ये कौन है ? जो महंगे जूतों, मोबाइल, मॉल की चकाचौंध दिखाकर स्वयं उत्पादक और हमें केवल उपभोक्ता बनाए बनाए जा रहा है।
- ये कौन है ? जो हमारी भाषा को बाजारवाद से प्रदू षत कर हमारी प्रतिभा को भुना रहा है।
- ये कौन है ? जो अमीर को अमीर, गरीब को और गरीब बनाकर अमीरों का समाजवाद और गरीबों का वनाशवाद बना रहा है।
- ये कौन है? जो दुनिया को एक बड़ा गांव बना रहा है।
- ये कौन है? जो हमारे भीतर खाली जगह ढूंढकर उसमें लालच भर रहा है।

इस वैश्विकरण की प्र क्रया में समाज के जो नाक-नक्श तैयार हो रहे हैं क व यहां उन्हीं की ही बात कर रहा है। चेतावनी भी दे रहा है क मौजूदा दौर में यह भी ‘पूंजीवादी लोकतंत्र’ तैयार हो रहा है इससे सावधान होना होगा। हमें सूचना क्रांति में सूचना के अंबारों को भी समझना होगा।

बरहाल पछले दो दशकों से इस संकट के दौर में हमारे क व, लेखक, संस्कृति कर्मी एकजुट होकर धारदार रचना कर अपनी भू मका का निर्वाह कर रहे हैं। हां, जितना वरोध होना चाहिए था उसमें जैसी निरंतरता होनी चाहिए थी वैसी नहीं हो रही है फर भी इन सब के बावजूद क वता की दुनिया में ऐसा कुछ जरूर है जिसे भूमंडलीकरणबाजारवाद का उदर ठीक से पचा नहीं पा रहा है।

क व की चंता आम आदमी और उसकी परिस्थितियां

आम आदमी की चंता करते हुए क व एकांत श्रीवास्तव ‘नागकेसर का देश यह’ क वता में कहते हैं- “हत्या, अपराध/हिंसा, दंगे, राजनीति/सब वैध/इस भूख के सं वधान में/पैसा खाती है यह भूख/और इसका पेट/कभी नहीं भरता/तुम इसे वकास कहते हो/क इक्कीसवीं सदी में/पहुंच चुकी सभ्यता/और मनुष्य चांद पर”।

क व आम आदमी के वचारों को गति देता है। वह कहता है जनता के सच्चे और मासूम सवालों के जवाब इस तंत्र के पास नहीं हैं आम जन को क व वकास के वषय में इस प्रकार

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

कहता है- मैं चाहता हूं की समस्याएं मुझे/इस रहस्य के बारे में/क ऐसा क्यों हो रहा है/क जब टूट रहे हैं मनुष्य/खलौनों की तरह/सब कुछ लोग बातें कर रहे हैं/वकास की/और बताइये क कहीं यह एक शब्द वकास/पर्दा तो नहीं वनाश पर।

(क व जिनेन्द्र श्रीवास्तव
क वता 'कहीं पर्दा तो नहीं')

क व की पैनी दृष्टि टिकी है मानवीय मूल्यों पर नैतिकता और संस्कृति पर। ये दोनों ही हमारे हाथों से फसलते जा रहे हैं। दरअसल पूंजी ने शासकों के हृदय में यह वभ्रम रच दिया है क वह सर्वशक्तिमान है, अजेय है। अपनी संस्कृति को बचाने के लए सरकार की नीतियों से खफा होकर लोग यदि उनका वरोध करते हैं तो सरकार उनका दमन करती है 'सलावाजुडूम' और 'ग्रीन हट' जैसे संगठन करके अपने ही लोगों को कुचल रही है। आदिवासी अपने जंगलों और जमीन को बचाना चाहते हैं तथा अपनी अस्मिता और संस्कृति को भी 'सुरेश सेननिशान्त' अपनी रचना 'बंदूक' में भटके हुए लोगों की आवाज में आवाज मलाकर कहते हैं।

सच्चाई से कोसों दूर/तानाशाह के दरबार में/चारणगीत गाने वाला क व/ज्यादा खतरनाक है/उस बंदूक वाले आदमी से।

क वता जन-जन में वास करती है द् वतीय वश्वयुद्ध के बाद चेस्वावनिवोश ने कहा था- "उस क वता का क्या मतलब जो देश व लोगों को बचा न सके।"

भूमंडलीकरण और अमेरिकी वर्चस्व के इस जमाने में हों सृजनशीलता का क्षरण हुआ है वहीं वज्ञान और टेक्नोलॉजी जो प्रगति के सूचक और वाहक है नैतिकता के क्षरण में तो टेक्नोलॉजी (इन्टनेट आदि) में पोर्नोग्राफी के कारण हमारी नैतिकता तार-तार भी हुई है। 'ज्ञानेन्द्रपति' की एक क वता 'नुकसान' में "नैतिकता का खा मयाजा/पूरे समाज को भुगतना पड़ेगा। बाह्य अटपटे आत्मसंकोची गुण सूत्रों को निकालकर। स्वार्थ के गुण सूत्र रोपे जा रहे हैं।... क्यों क फायदेमंद में ही हैं। मायावी समय में।"

बाजारवाद

क व की भूमंडलीकरण और उसकी उपज बाजारवादउपभोक्तावाद को लेकर कोई भ्रम की स्थिति नहीं है। क व की दृष्टि में हमें सर्फ एक उपभोक्ता के रूप में देखा जा रहा है। कुछ देश ही उत्पादक हैं बाकी सब उपभोक्ता। यह एक नए तरह का साम्राज्यवाद है जिसका मु खया अमेरिका है। ज्ञानेन्द्रपति की क वता 'आदमी उर्फ गुलामी'"और आपकी पसंद/ये तय करेंगे/जिनके

पास उपकरणों का कायाबल वज्ञापनों का मायाबल है। आपकी आजादी/चीजों का गुलाम बनने की आजादी/वश्व बाजार जिनका जठर/हमेशा उठा हुआ है उनका शटर।"

बाजारवाद के अ भशापों को साधारण जन भुगत रहा है। समानता, उदारता और मानवता सब कुछ रौंदकर यह बाजार तंत्र हमारे ऊपर हावी है। बाजार ने उपभोक्ताओं के दिलोदिमाग में ऐसा तिगड़म रचा है जो उनकी चेतना को एक खास दिशा में मोड़ रहा है। उसे भ्रम होता है क बाजार उसकी मु ी में है यथार्थ में वह बाजार की मु ी में है। वज्ञापनों ने उसके सामने आभासी दुनिया की रचना की है अर्थात् आप वही खरीदेंगे जिसके बारे में आपकी राय बनाई जी चुकी है। उ चत ही है- "बाजार उस यान जैसा है जो नियंत्रित गति से चलता है और जिसमें लालच गीयर और ब्रेक हो जाते हैं। काम केवल एक्सीलेटर करता है।"[iii]

भूमंडलीकरण बाजार और कारपोरेट घरानों से जुड़ी माइक्रोफाइनेंस कंपनियां कसानों को कर्ज देकर लूट रही है। इनका कार्यकलाप ईस्ट इं डया कंपनी से बहुत मलता-जुलता है। 'करने दीजिए कसानों को आत्महत्या हमें क्या?' यह इनकी सोच है।

बाजारवाद का दुष्परिणाम अंधेरे कोनों तक अनुभव कया जा रहा है। इसके परिणाम उलट है यह तो मोटर उद्योग ही बता रहा है। गा ड़यां हैं और इतनी अ धक हैं क सड़क गायब हो गई। जिन मोटर वाहनों की रफ्तार के बूते पर नगरों के आकार में वस्तार हुआ वे चींटी की चाल से चल रही है जिनसे आगे पैदल आदि निकला जा रही है। साइ कल सवार को ट्रेक मले, तो वह बहुत आगे निकल जाए।

"होनी है बेहिसाब सयासत इसी जगह
देते रहे आवाम को चक्कर नए-नए
बाजार हाट सब तेरे हम भी तेरे गुलाम
स्वागत है मल्टीनेशनलहिटलर नए नए।"

औद्यो गक वकास के नाम पर वस्थापन का दंश - गरीब आम जन इतनी पीड़ा के साथ झेल रहा है जहां कभी लहलहाते हुए खेत हुआ करते थे। छोटे-छोटे घर और छप्पर, झोंप ड़यां हुआ करती थी। वहां आज धुआं उगलती हुई वशाल चमनी खड़ी है। बेबस, निरीह, और हर तरफ से छला हुआ उसके पास बस एक ही रास्ता है 'मरना'हाला क यह मरना भी एक प्रकार का वरोध है संघर्ष है। तेलुगु क व 'वरवरा राव' की क वता -"गरूढ़ की तरह डैनों वाले/व मंगल की तरह बुलडोजर/उस प्लांट के लए मकानों को ढहाने और गांवों को खाली

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

कराने/के लए आगे बढ़ रहे हैं/खैर, तुम्हारे सामने वाली झील के पत्थर पर/सफेद चूने पर/लौह लाल अक्षरों में लखा है/यह गांव हमारा है/यह धरती हमारी है/यह जगह छोड़ने के बजाए/हम यहां मरना पसंद करेंगे।"

साम्राज्यवादी शक्तियां ग्रह भी इनकी गरफ्त में आ गए। ये शक्तियां जीवन की संभावनाओं के बहाने ऊर्जा के स्रोत खोज रही है- राजीव रंजन साम्राज्यवादी शक्तियों के चरित्र को अपनी क वता -'जब सब कुछ तय हो गया है ' में बेनकाब करते हुए लखते हैं/जब तुमने ह थया ली है/सारी की सारी धरती/प्लूटो और नेप्चून तक/पहुंचने वाले हैं तुम्हारे हाथ/मेरे लए छोड़ दो/महासागरों की हलचल।इन शक्तियों के लालच के समाने पृथ्वी के संसाधन थोड़े हैं। उनके पेट की कोई सीमा नहीं। आम आदमी की जिजी वषा का भी कोई अंत नहीं।

हमारी अर्थव्यवस्था को लीलने के दांवपेच भी साम्राज्यवादी ताकतों के चल रहे हैं। वर्ल्ड बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, वश्व व्यापार संगठन की नीतियों के मार्फत हमारी अर्थव्यवस्था पर में ताकतें टकटकी लगा रही हैं। वास्त वकता यह है क यह अपनी सैद्धांतिकी और दर्शन मुलायम शब्दों में पेश करता है आम जन को इसके पैंतरे समझने होंगे। नॉमचौमस्की का मानना है "लगभग 20 प्रतिशत लोग राजनीतिक वर्ग के होते हैं उनके मुंह में जुबान होती है।... बाकी 80 प्रतिशत आदेश मानने वाला वर्ग है। उसे सोचने का काम सोचने की जरूरत नहीं। इन्हीं लोगों को कीमत भी चुकानी पड़ती है।"[iv]

हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी कृ ष पर भी साम्राज्यवादी ताकतों का बोलबाला है। हमारे कसान आत्महत्या कर रहे हैं। हमारे परम्परागत खेती के तरीकों को भी खत्म कया जा रहा है। परिणामस्वरूप गांव में बीजों के रख-रखाव को पूरा वज्ञान समाप्त हो गया है। सरकार कसानों की स्थिति से बेखबर है उलटे उस इंडस्ट्री को बढ़ावा दे रही है जो बी.टी. बीजों का उत्पादन करे। कानून बनाकर प्राकृतिक और स्थानीय संपदा को कानून के दायरे में ला रही है। 'बासमती चावल'भूमंडलीकरण की नीतियों और कारगुजारियों को दर्शाती हैं।

संजय कुंदन कहते हैं- "क्या तुम्हें खेतों की ओर चले आते/वशालकाय जूतों के निशान दिखाई देते हैं/तुम्हारे सरहाने एक अजनबी सौदागर/रखा गया है एक अनुबंध पत्र/कतने समझौते करोगे तुम/वे तुम्हारे पोखरों से उठा ले जाएंगे/गुलाबी आंखों वाली मछ लयां/वे फांस ले जाएंगे/सबसे मीठा गाने वाली च ड़यां/एक दिन तुम्हें अपने हाथ को साबित करना होगा अपना हाथ/अपनी आंख को अपनी आंख।"

वास्तव में साम्राज्यवाद अपनी चाल बदलता है चरित्र नहीं यह उत्पादन संसाधनों पर कब्जा जमाता है दुनिया का 91 प्रतिशत चावल ए शया में पैदा होता है और 'क सनजेरास्विस' कंपनी ने 2004 में यह दावा कया क जावल की जैव वज्ञानी उत्पत्ति पर उसका एका धकार है। हल्दी, नीम, बासमती चावल का पेटेंट वाली कंपनियों और उनकी सहयोगी कंपनियों को सरकार 500 स्पेशलइकॉनो मक जोन बनाने का तोहफा दे रही है वकास के नाम पर लोगों को वस्था पत कर रही है।

व्यंग्यात्मक रूप में अल्बर्टऑइस्टीन के शब्द याद आते हैं वास्तव में ये कैसा वरोधाभास है।

"एक समान सोच कसी समस्या का समाधान नहीं करती। रास्ता वरोधाभासी सोच से ही निकलता है।"[v]

सरकार की इस तरह की नीतियों को जानकर, देखकर तो यही लगता है क क्या वो वरोधाभासी सोच से कुछ परिणाम निकालना चाहती है।

साम्राज्यवाद के बढ़ते शकंजे को देखकर क व को न जाने कतनी शंकाएं घेर लेती हैं। इसी लए वह व्यवस्था परिवर्तन की बात कहता है। क व राम तेलंग अपनी क वता में 'सवाल करो' में लखते हैं- "सवाल करो खड़े होकर/अगर चीजें तुम्हें समझ नहीं आती/ अगर तुम्हारे पास/ वे चीजें नहीं हैं जो दूसरों के पास हैं/ तो सवाल करो/ और जनों समझो ऐसा क्यों है/ ऐसा कौन चाहता है/ क सवाल ही न पैदा हो।"

क व अपने हक के लए आवाज बुलंद करने को कहता है इस पूंजी की चंचलता ने बीमार कस्म के समाज का निर्माण कया है पैसे की भूख में व्यक्ति ववेक शून्य हो गया क व इस पूंजी की चंचलता की गति को रोकने की व्यवस्था करना चाहता है- "इसी लए दोस्तों ऐसे/ में जब गति तेज हो/सब असावधानी का एक क्षण भी/ भारी है समूची धरती पर।"

क व की गहरी संवेदना और आम जन से/इस लए वह कहता है क भूमंडलीकरण आम जन के ववेक को छीनने का प्रयास कर रहा है वह उसे हाड-मांस का पुतला बना देना चाहता है। आज मनुष्य का भगवान पैसा है उसमें मानवता का स्पेस कम बचा है। डॉ. योगेन्द्र लखते हैं- "इस क्लोबल होती दुनिया में मनुष्य अपनी जड़ों से उखड़ता जा रहा है। गहरी आत्मीय स्थानीयता के बिना क्या कोई ग्लोबल हो सकता है ? जड़ के बिना कोई पौधा वक सत या जी वत रहा है क्या?"[vi]

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

इसी कारण क व भूमंडलीकरण की चुनौतियों से उबरने के लए प्रयासरत है। अंबिकादास की क वता 'मायाबाजार' में -'एक जादूगर/एक हाथ का पैसा दूसरे हाथ में दिखाता है/ पैसा गायब हो जाता है/और अंततः कसी और की जेब में/नजर आता है/माया बाजार में/मेरे लए तो सर्फ/छाता सस्ता हुआ है।

क व भावी पीढ़ी की चुनौतियों को भी साफ-साफ देख रहा है। चन्द्रकांतदेवताले कहता है- "कैसे छोड़कर जाऊंगा बच्चों/मैं तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को/इस काँटेदार भूल-भूलैया में।"

निष्कर्षतः हम कह सकेत हैं क सर्फ समस्या कहना ही समाधान नहीं है। उसका हल भी सोचना आवश्यक है। हमें जागना होगा और एक बड़े पैमाने पर भूमंडलीकरण, निजीकरण, उदारीकरण और बाजारीकरण का प्रतिरोध करना होगा। यान अपने वर्तमान के सुखों को त्यागना होगा। अपने लालच और लोभ पर लगाम लगानी होगी तथा जो व्याख्याकार इसे भूमंडलीकरण को उद्धार मानते हैं वो मानते है क सबके दुःख-सुख, लाभ-हानि और सद्भावना की खास योजना समस्त धरा पर वैश्वीकरण के रूप में वद्यमान हो रही है। परन्तु यदि वो नए-नए पैंतरों द्वारा और नए नए तर्कों द्वारा केवल और केवल इसे उ चत ठहराने की ही जिद करेंगे तो लालच, फरेब की निर्मम दुनिया को ही संबल देंगे। अब आवश्यकता है अपनी स्पीड पर ब्रेक लगाने की ओर ऐसी जीवन शैली वक सत करने की जो प्राकृतिक संसाधनों पर भारी न पड़े।

इस प्रकार पछले दो दशकों से यह क वता कसी वचारधारा वशेष के आग्रह के बिना, जन सरोकारों से जुड़ी हुई है यही इस क वता की उपलब्धि है। 'माधव कौ शक' के शब्दों में-

"जाने कब महसूस करोगो, गहराई बाजारों की
घर आंगन को लील गई है परछाई बाजारों की।
पहले तो शहरों में केवल लंबे चौड़े होते थे।
अब तो आसमान छूती है ऊंचाई बाजारों की
जब भी मैंने भरी भीड़ में खुद को तन्हा देखा
तब तब मुझको याद आई है तनहाई बाजारों की।
चहल पहल की चकाचौंध में, जाने कतने दर्द छिपे
सर्फ मातमी धुन पर गाती शहनाई बाजारों की।
लाखों जिस्म बिके तब जाकर, एक नुमाइश कहीं लगी
लाखों हाथ कटाकट की है, भरपाई बाजारों की।"

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

सन्दर्भ

i रजनी कोठारी, जनता से डरते अ भजन और कमजोर होता राष्ट्र-राज्य लेख, भारत का भूमंडलीकरण, सं. अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 2008, पृ. 91

ii मंगलेशडबराल, क वता -भूमंडलीकरण, समकालीन भारतीय साहित्य, साहित्य अकादमी द्वैमा सक पत्रिका, संपादक मंडल, सुनीलगंगोपाध्याय वश्वनाथ प्रसाद तिवारी, अग्रहारकृष्णमूर्ति, साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35 फरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 27

iii सुनीलगंगोपाध्याय, वश्वनाथ प्रसाद तिवारी, अग्रहारकृष्णमूर्ति (संपा.), समकलीन भारतीय साहित्य (अंक 156, जुलाई-अगस्त 2011),रवीन्द्र भवन, 35 फरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली,पृ. 67

iv नोमचॉमस्की, सत्ता के सामने, अनु. एवं सं., अनूप सेठी, आधार प्रकाशन, पंचकूला, प्रथम संस्करण 2006, पृ. 33

v अल्बर्टआइस्टीन, सूरत बदलनी चाहिए, संपादकीय लेख, अमर उजाला, बुधवार 30 जनवरी, 2013 (चंडीगढ़)

vi डॉ. योगेन्द्र, सृजनशील दुनिया के लए कुछ शब्द आलेख, युवा संवाद, हिन्दी मा सक, सं. ए.के. नई दिल्ली, जनवरी 2007, पृ. 14